सरल और सर्वोपयोगी

गायत्री हवन - विधि



- श्रीराम शर्मा आचार्य

यज्ञ का माहात्म्य

यज्ञोऽयं सर्वकामधुक्।

—अंगिरा

यह यज्ञ सब कामनाओं को पूर्ण करने वाला है।

अग्निहोत्रं तु गायत्री मंत्रेण विधिवत् कृतम्।
सर्वेष्ववसरेष्वेव शुभमेव मतं बुधैः॥

—गायत्री संध्या

गायत्री मंत्र से विधिपूर्वक किया गया अग्निहोत्र सब अवसरों पर विद्वानों ने शुभ माना है।

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।

—गीता ३.९

यज्ञ के निमित्त किए गए कर्मों के सिवाय दूसरे कर्मों को करने से यह मनुष्य कर्म-बंधन में बँधता है।

असुराश्च सुराश्चैव पुण्यहेतोर्मखक्रियाम्।

—महाभारत

पुण्य प्राप्त करने के लिए देवता और असुर दोनों ही यज्ञ क्रिया की ओर प्रवृत्त होते हैं।

करिहहिं विप्र होममख सेवा।
तेहि प्रसंग सहजहिं बस देवा॥

—श्रीरामचरितमानस

विप्र लोग हवन, यज्ञ और सेवा करते हैं, इसलिए स्वभाववश ही देवगण उनके वश में रहते हैं।

होम जग उरब तप पूजा। कोटि तीर्थ इसनान करीजा॥

—सिक्खधर्म

पवित्र हवन, यज्ञ, तप, पूजा, तीर्थ स्नान आदि शुभ कर्म मनुष्यों को करने चाहिए।

सरल और सर्वोपयोगी
गायत्री हवन-विधि

सम्पादक

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना प्रेस

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फेक्स नं०- २५३०२००

संशोधित संस्करण २००८ मूल्य : ९.०० रुपये

प्राक्कथन

गायत्री भारतीय संस्कृति की जननी और यज्ञ भारतीय धर्म का पिता है। इन दोनों का समन्वय ही भारतीय तत्त्व ज्ञान का संगम-समन्वय कहा जा सकता है। विवेक बुद्धि की प्रतिनिधि गायत्री सद्भावनाओं और उत्कृष्ट चिंतन की प्रेरणा देती है। यज्ञ आत्मसंयम और उदार व्यवहार का प्रेरक है, उसमें सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्द्धन का, आदर्श कर्तृत्व का दिशा-निर्देश है। संक्षेप में अन्तरंग और बहिरंग जीवन को यज्ञीय परम्पराओं के अनुरूप ढालने की रीति-नीति को हृदयंगम करने की धर्म चेष्टा को गायत्री यज्ञ कह सकते हैं। इस कर्मकाण्ड के माध्यम से जनमानस को मानवोचित स्तर तक ऊँचा उठा ले जाने में बड़ी सहायता मिलती रही है। भविष्य में इस प्रसंग को अधिकाधिक विस्तृत करने में नवनिर्माण की दिशा में और भी अधिक सहायता मिल सकती है।

गायत्री यज्ञ परम्परा को अधिक विस्तृत, व्यापक और लोकप्रिय बनाने की दृष्टि से यह आवश्यक समझा गया है कि कर्मकाण्ड को कुछ और संक्षिप्त किया जाये, ताकि विधि-विधानों की अधिक अच्छी व्याख्या करते हुए लोकशिक्षण के मूल उद्देश्य को पूरा करने के लिए अधिक समय लगाया जा सके।

यह संक्षिप्तीकरण उन प्रसंगों के लिए किया गया है, जिनमें कम समय में गायत्री यज्ञ पूरा कर लेने की आवश्यकता अनुभव की जाती है। महिला जागरण के साप्ताहिक सत्संगों में तथा युग निर्माण शाखाओं की साप्ताहिक गोष्ठियों में संक्षिप्त हवन क्रम चलना ही संभव है। प्रस्तुत प्रक्रिया के आधार पर प्राय: गोष्ठी का शेष समय लोकशिक्षण के अन्य प्रवचनात्मक कार्यों में प्रयुक्त हो सकता है। शुभ अवसरों पर लोग गायत्री यज्ञ तो कराना चाहते हैं, पर उसमें अधिक देर लग जाने और अन्य क्रिया-कलापों के लिए समय न बचने की कठिनाई के कारण उसे छोड़ना पड़ता है। आशा है कि इस संक्षिप्तीकरण से वह कठिनाई दूर हो जायेगी। व्याख्या करने तथा आयोजन-व्यवस्था की जानकारी में भी इस नयी पुस्तिका से सहायता मिलेगी-ऐसी आशा है।

- ब्रह्मवर्चस

भूमिका

गायत्री यज्ञ-उपयोगिता और आवश्यकता

भारतीय संस्कृति का उद्गम, ज्ञान-गंगोत्री गायत्री ही है। भारतीय धर्म का पिता यज्ञ को माना जाता है। गायत्री को सद्विचार और यज्ञ को सत्कर्म का प्रतीक मानते हैं। इन दोनों का सम्मिलित स्वरूप सद्भावनाओं एवं सत्प्रवृत्तियों को बढ़ाते हुए विश्व-शांति एवं मानव कल्याण का माध्यम बनता है और प्राणिमात्र के कल्याण की सम्भावनाएँ बढ़ती हैं।

यज्ञ शब्द के तीन अर्थ हैं- १- देवपूजा, २-दान, ३-संगतिकरण। संगतिकरण का अर्थ है-संगठन। यज्ञ का एक प्रमुख उद्देश्य धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों को सत्प्रयोजन के लिए संगठित करना भी है। इस युग में संघ शक्ति ही सबसे प्रमुख है। परास्त देवताओं को पुन: विजयी बनाने के लिए प्रजापति ने उनकी पृथक्-पृथक् शक्तियों का एकीकरण करके संघ-शक्ति के रूप में दुर्गा-शक्ति का प्रादुर्भाव किया था। उस माध्यम से उनके दिन फिरे और संकट दूर हुए। मानवजाति की समस्या का हल सामूहिक शक्ति एवं संघबद्धता पर निर्भर है, एकाकी-व्यक्तिवादी-असंगठित लोग दुर्बल और स्वार्थी माने जाते हैं। गायत्री यज्ञों का वास्तविक लाभ सार्वजनिक रूप से, जन सहयोग से सम्पन्न कराने पर ही उपलब्ध होता है।

यज्ञ का तात्पर्य है-त्याग, बलिदान, शुभ कर्म। अपने प्रिय खाद्य पदार्थों एवं मूल्यवान् सुगंधित पौष्टिक द्रव्यों को अग्नि एवं वायु के माध्यम से समस्त संसार के कल्याण के लिए यज्ञ द्वारा वितरित किया जाता है। वायु शोधन से सबको आरोग्यवर्धक साँस लेने का अवसर मिलता है। हवन हुए पदार्थ वायुभूत होकर प्राणिमात्र को प्राप्त होते हैं

और उनके स्वास्थ्यवर्धन, रोग निवारण में सहायक होते हैं। यज्ञ काल में उच्चरित वेद मंत्रों की पुनीत शब्द-ध्वनि आकाश में व्याप्त होकर लोगों के अंत:करण को सात्विक एवं शुद्ध बनाती है। इस प्रकार थोड़े ही खर्च एवं प्रयत्न से यज्ञकर्त्ताओं द्वारा संसार की बड़ी सेवा बन पड़ती है।

वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार सहकारिता, त्याग, परोपकार आदि प्रवृत्तियों पर निर्भर है। यदि माता अपने रक्त-मांस में से एक भाग नये शिशु का निर्माण करने के लिए न त्यागे, प्रसव की वेदना न सहे, अपना शरीर निचोड़कर उसे दूध न पिलाए, पालन-पोषण में कष्ट न उठाए और यह सब कुछ नितान्त नि:स्वार्थ भाव से न करे, तो फिर मनुष्य का जीवन-धारण कर सकना भी संभव न हो। इसलिए कहा जाता है कि मनुष्य का जन्म यज्ञ भावना के द्वारा या उसके कारण ही संभव होता है। गीताकार ने इसी तथ्य को इस प्रकार कहा है कि प्रजापति ने यज्ञ को मनुष्य के साथ जुड़वा भाई की तरह पैदा किया और यह व्यवस्था की, कि एक दूसरे का अभिवर्धन करते हुए दोनों फलें-फूलें।

यदि यज्ञ भावना के साथ मनुष्य ने अपने को जोड़ा न होता, तो अपनी शारीरिक असमर्थता और दुर्बलता के कारण अन्य पशुओं की प्रतियोगिता में यह कब का अपना अस्तित्व खो बैठा होता। यह जितना भी अब तक बढ़ा है, उसमें उसकी यज्ञ भावना ही एक मात्र माध्यम है। आगे भी यदि प्रगति करनी हो, तो उसका आधार यही भावना होगी।

प्रकृति का स्वभाव यज्ञ परंपरा के अनुरूप है। समुद्र बादलों को उदारतापूर्वक जल देता है, बादल एक स्थान से दूसरे स्थान तक उसे ढोकर ले जाने और बरसाने का श्रम वहन करते हैं। नदी, नाले

प्रवाहित होकर भूमि को सींचते और प्राणियों की प्यास बुझाते हैं। वृक्ष एवं वनस्पतियाँ अपने अस्तित्व का लाभ दूसरों को ही देते हैं। पुष्प और फल दूसरे के लिए ही जीते हैं। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, वायु आदि की क्रियाशीलता उनके अपने लाभ के लिए नहीं, वरन् दूसरों के लिए ही है। शरीर का प्रत्येक अवयव अपने निज के लिए नहीं, वरन् समस्त शरीर के लाभ के लिए ही अनवरत गति से कार्यरत रहता है। इस प्रकार जिधर भी दृष्टिपात किया जाए, यही प्रकट होता है कि इस संसार में जो कुछ स्थिर व्यवस्था है, वह यज्ञ वृत्ति पर ही अवलम्बित है। यदि इसे हटा दिया जाए, तो सारी सुन्दरता कुरूपता में और सारी प्रगति विनाश में परिणत हो जायेगी। ऋषियों ने कहा है- यज्ञ ही इस संसार चक्र का धुरा है। धुरा टूट जाने पर गाड़ी का आगे बढ़ सकना कठिन है।

यज्ञीय विज्ञान

मन्त्रों में अनेक शक्ति के स्रोत दबे हैं। जिस प्रकार अमुक स्वर-विन्यास से युक्त शब्दों की रचना करने से अनेक राग-रागिनियाँ बजती हैं और उनका प्रभाव सुनने वालों पर विभिन्न प्रकार का होता है, उसी प्रकार मंत्रोच्चारण से भी एक विशिष्ट प्रकार की ध्वनि तरंगें निकलती हैं और उनका भारी प्रभाव विश्वव्यापी प्रकृति पर, सूक्ष्म जगत् पर तथा प्राणियों के स्थूल तथा सूक्ष्म शरीरों पर पड़ता है।

यज्ञ के द्वारा जो शक्तिशाली तत्त्व वायुमण्डल में फैलाये जाते हैं, उनसे हवा में घूमते असंख्यों रोग-कीटाणु सहज ही नष्ट होते हैं। डी.डी.टी., फिनायल आदि छिड़कने, बीमारियों से बचाव करने वाली दवाएँ या सुइयाँ लेने से भी कहीं अधिक कारगर उपाय यज्ञ करना है। साधारण रोगों एवं महामारियों से बचने का यज्ञ एक सामूहिक उपाय

है। दवाओं में सीमित स्थान एवं सीमित व्यक्तियों को ही बीमारियों से बचाने की शक्ति है; पर यज्ञ की वायु तो सर्वत्र ही पहुँचती है और प्रयत्न न करने वाले प्राणियों की भी सुरक्षा करती है। मनुष्य की ही नहीं, पशु-पक्षियों, कीटाणुओं एवं वृक्ष-वनस्पतियों के आरोग्य की भी यज्ञ से रक्षा होती है।

यज्ञ की ऊष्मा मनुष्य के अंतःकरण पर देवत्व की छाप डालती है। जहाँ यज्ञ होते हैं, वह भूमि एवं प्रदेश सुसंस्कारों की छाप अपने अन्दर धारण कर लेता है और वहाँ जाने वालों पर दीर्घकाल तक प्रभाव डालता रहता है। प्राचीनकाल में तीर्थ वहीं बने हैं, जहाँ बड़े-बड़े यज्ञ हुए थे। जिन घरों में, जिन स्थानों में यज्ञ होते हैं, वह भी एक प्रकार का तीर्थ बन जाता है और वहाँ जिनका आगमन रहता है, उनकी मनोभूमि उच्च, सुविकसित एवं सुसंस्कृत बनती है। महिलाएँ, छोटे बालक एवं गर्भस्थ बालक विशेष रूप से यज्ञ शक्ति से अनुप्राणित होते हैं। उन्हें सुसंस्कारी बनाने के लिए यज्ञीय वातावरण की समीपता बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है।

कुबुद्धि, कुविचार, दुर्गुण एवं दुष्कर्मों से विकृत मनोभूमि में यज्ञ से भारी सुधार होता है। इसलिए यज्ञ को पापनाशक कहा गया है। यज्ञीय प्रभाव से सुसंस्कृत हुई विवेकपूर्ण मनोभूमि का प्रतिफल जीवन के प्रत्येक क्षण को स्वर्गीय आनन्द से भर देता है, इसलिए यज्ञ को स्वर्ग देने वाला कहा गया है।

यज्ञीय धर्म प्रक्रियाओं में भाग लेने से आत्मा पर चढ़े हुए मल-विक्षेप दूर होते हैं। फलस्वरूप तेजी से उसमें ईश्वरीय प्रकाश जगता है। यज्ञ से आत्मा में ब्राह्मण-तत्त्व, ऋषि-तत्त्व की वृद्धि दिनानुदिन होती है और आत्मा को परमात्मा से मिलाने का परम लक्ष्य बहुत सरल हो जाता है। आत्मा और परमात्मा को जोड़ देने का, बाँध देने का

कार्य यज्ञाग्नि द्वारा ऐसे ही होता है, जैसे लोहे के टूटे हुए टुकड़ों को वेल्डिंग की अग्नि जोड़ देती है। ब्राह्मणत्व यज्ञ के द्वारा प्राप्त होता है। इसलिए ब्राह्मणत्व प्राप्त करने के लिए एक तिहाई जीवन यज्ञ कर्म के लिए अर्पित करना पड़ता है। लोगों के अंत:करण में अन्त्यज वृत्ति घटे-ब्राह्मण वृत्ति बढ़े, इसके लिए वातावरण में यज्ञीय प्रभाव की शक्ति भरना आवश्यक है।

विधिवत् किये गये यज्ञ इतने प्रभावशाली होते हैं, जिनके द्वारा मानसिक दोषों-दुर्गुणों का निष्कासन एवं सद्‌भावों का अभिवर्धन नितान्त संभव है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, ईर्ष्या, द्वेष, कायरता, कामुकता, आलस्य, आवेश, संशय आदि मानसिक उद्वेगों की चिकित्सा के लिए यज्ञ एक विश्वस्त पद्धति है। शरीर के असाध्य रोगों तक का निवारण उससे हो सकता है।

अग्निहोत्र के भौतिक लाभ भी हैं। वायु को हम मल, मूत्र, श्वास तथा कल-कारखानों के धुआँ आदि से गन्दा करते हैं। गन्दी वायु रोगों का कारण बनती है। वायु को जितना गन्दा करें, उतना ही उसे शुद्ध भी करना चाहिए। यज्ञों से वायु शुद्ध होती है। इस प्रकार सार्वजनिक स्वास्थ्य की सुरक्षा का एक बड़ा प्रयोजन सिद्ध होता है।

यज्ञ का धूम्र आकाश में-बादलों में जाकर खाद बनकर मिल जाता है। वर्षा के जल के साथ जब वह पृथ्वी पर आता है, जिसे पर्जन्य कहते हैं, तो उससे परिपुष्ट अन्न, घास तथा वनस्पतियाँ उत्पन्न होती हैं, जिनके सेवन से मनुष्य तथा पशु-पक्षी सभी परिपुष्ट होते हैं। यज्ञाग्नि के माध्यम से शक्तिशाली बने मन्त्रोच्चार के ध्वनि कम्पन, सुदूर क्षेत्र में बिखरकर लोगों का मानसिक परिष्कार करते हैं, फलस्वरूप शारीरिक स्वास्थ्य की तरह मानसिक स्वास्थ्य भी बढ़ता है।

अनेक प्रयोजनों के लिए-अनेक कामनाओं की पूर्ति के लिए,

अनेक विधानों के साथ, अनेक विशिष्ट यज्ञ भी किये जाते हैं। दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ करके चार उत्कृष्ट सन्तानें प्राप्त की थीं, अग्निपुराण में तथा उपनिषदों में वर्णित पंचाग्नि विद्या में ये रहस्य बहुत विस्तारपूर्वक बताये गये हैं। विश्वामित्र आदि ऋषि प्राचीनकाल में असुरता निवारण के लिए बड़े-बड़े यज्ञ करते थे। राम-लक्ष्मण को ऐसे ही एक यज्ञ की रक्षा के लिए स्वयं जाना पड़ा था। लंका युद्ध के बाद राम ने दस अश्वमेध यज्ञ किये थे। महाभारत के पश्चात् कृष्ण ने भी पाण्डवों से एक महायज्ञ कराया था, उनका उद्देश्य युद्धजन्य विक्षोभ से क्षुब्ध वातावरण की असुरता का समाधान करना ही था। जब कभी आकाश के वातावरण में असुरता की मात्रा बढ़ जाए, तो उसका उपचार यज्ञ प्रयोजनों से बढ़कर और कुछ हो नहीं सकता। आज पिछले दो महायुद्धों के कारण जनसाधारण में स्वार्थपरता की मात्रा अधिक बढ़ जाने से वातावरण में वैसा ही विक्षोभ फिर उत्पन्न हो गया है। उसके समाधान के लिए यज्ञीय प्रक्रिया को पुनर्जीवित करना आज की स्थिति में और भी अधिक आवश्यक हो गया है।

यज्ञीय प्रेरणाएँ

यज्ञ आयोजनों के पीछे जहाँ संसार की लौकिक सुख-समृद्धि को बढ़ाने की विज्ञान सम्मत परंपरा सन्निहित है-जहाँ देव शक्तियों के आवाहन-पूजन का मंगलमय समावेश है, वहाँ लोकशिक्षण की भी प्रचुर सामग्री भरी पड़ी है। जिस प्रकार 'बाल फ्रेम' में लगी हुई रंगीन लकड़ी की गोलियाँ दिखाकर छोटे विद्यार्थियों को गिनती सिखाई जाती है, उसी प्रकार यज्ञ का दृश्य दिखाकर लोगों को यह भी समझाया जाता है कि हमारे जीवन की प्रधान नीति 'यज्ञ' भाव से परिपूर्ण होनी चाहिए। हम यज्ञ आयोजनों में लगें, परमार्थ परायण बनें और जीवन

को यज्ञ परंपरा में ढालें। हमारा जीवन यज्ञ के समान पवित्र, प्रखर और प्रकाशवान् हो। गंगा स्नान से जिस प्रकार पवित्रता, शान्ति, शीतलता, आर्द्रता को हृदयंगम करने की प्रेरणा ली जाती है, उसी प्रकार यज्ञ से तेजस्विता, प्रखरता, परमार्थ-परायणता एवं उत्कृष्टता का प्रशिक्षण मिलता है। यज्ञ की प्रक्रिया को जीवन यज्ञ का एक रिहर्सल कहा जा सकता है। अपने घी, शक्कर, मेवा, औषधियाँ आदि बहुमूल्य वस्तुएँ जिस प्रकार हम परमार्थ प्रयोजनों में होम करते हैं, उसी तरह अपनी प्रतिभा, विद्या, बुद्धि, समृद्धि, सामर्थ्य आदि को भी विश्व मानव के चरणों में समर्पित करना चाहिए। इस नीति को अपनाने वाले व्यक्ति न केवल समाज का, बल्कि अपना भी सच्चा कल्याण करते हैं। संसार में जितने भी महापुरुष, देवमानव हुए हैं, उन सभी को यही नीति अपनानी पड़ी है। जो उदारता, त्याग, सेवा और परोपकार के लिए कदम नहीं बढ़ा सकता, उसे जीवन की सार्थकता का श्रेय और आनन्द भी नहीं मिल सकता।

यज्ञीय प्रेरणाओं का महत्त्व समझाते हुए ऋग्वेद में यज्ञाग्नि को पुरोहित कहा गया है। उसकी शिक्षाओं पर चलकर लोक-परलोक दोनों सुधारे जा सकते हैं। वे शिक्षाएँ इस प्रकार हैं-

१- जो कुछ हम बहुमूल्य पदार्थ अग्नि में हवन करते हैं, उसे वह अपने पास संग्रह करके नहीं रखती, वरन् उसे सर्वसाधारण के उपयोग के लिए वायुमण्डल में बिखेर देती है। ईश्वर प्रदत्त विभूतियों का प्रयोग हम भी वैसा ही करें, जो हमारा यज्ञ पुरोहित अपने आचरण द्वारा सिखाता है। हमारी शिक्षा, समृद्धि, प्रतिभा आदि विभूतियों का न्यूनतम उपयोग हमारे लिए और अधिकाधिक उपयोग जन-कल्याण के लिए होना चाहिए।

२- जो वस्तु अग्नि के सम्पर्क में आती है, उसे वह दुरदुराती

नहीं, वरन् अपने में आत्मसात् करके अपने समान ही बना लेती है। जो पिछड़े या छोटे या बिछुड़े व्यक्ति अपने सम्पर्क में आएँ, उन्हें हम आत्मसात् करने और समान बनाने का आदर्श पूरा करें।

३- अग्नि की लौ, कितना ही दबाव पड़े पर नीचे की ओर नहीं झुकती, वरन् ऊपर को ही रहती है। प्रलोभन, भय कितना ही सामने क्यों न हो, हम अपने विचारों और कार्यों की अधोगति न होने दें। विषम स्थितियों में अपना संकल्प और मनोबल अग्नि शिखा की तरह ऊँचा ही रखें।

४- अग्नि जब तक जीवित है, उष्णता एवं प्रकाश की अपनी विशेषताएँ नहीं छोड़ती। उसी प्रकार हमें भी अपनी गतिशीलता की गर्मी और धर्म-परायणता की रोशनी घटने नहीं देनी चाहिए। जीवन भर पुरुषार्थी और कर्त्तव्यनिष्ठ रहना चाहिए।

५- यज्ञाग्नि का अवशेष भस्म मस्तक पर लगाते हुए हमें सीखना होता है कि मानव जीवन का अन्त मुट्ठी भर भस्म के रूप में शेष रह जाता है। इसलिए अपने अन्त को ध्यान में रखते हुए जीवन के सदुपयोग का प्रयत्न करना चाहिए।

अपनी थोड़ी-सी वस्तु को वायुरूप में बनाकर उन्हें समस्त जड़-चेतन प्राणियों को बिना किसी अपने-पराये, मित्र-शत्रु का भेद किये साँस द्वारा इस प्रकार गुप्तदान के रूप में खिला देना कि उन्हें पता भी न चले कि किस दानी ने हमें इतना पौष्टिक तत्त्व खिला दिया, सचमुच एक श्रेष्ठ ब्रह्मभोज का पुण्य प्राप्त करना है। कम खर्च में बहुत अधिक पुण्य प्राप्त करने का यज्ञ एक सर्वोत्तम उपाय है।

यज्ञ सामूहिकता का प्रतीक है। अन्य उपासनाएँ या धर्म-प्रक्रियाएँ ऐसी हैं, जिन्हें कोई अकेला कर या करा सकता है; पर यज्ञ ऐसा कार्य है, जिसमें अधिक लोगों के सहयोग की आवश्यकता है।

होली आदि बड़े यज्ञ तो सदा सामूहिक ही होते हैं। यज्ञ आयोजनों से सामूहिकता, सहकारिता और एकता की भावनाएँ विकसित होती हैं।

प्रत्येक शुभ कार्य, प्रत्येक पर्व-त्यौहार, संस्कार यज्ञ के साथ सम्पन्न होता है। यज्ञ भारतीय संस्कृति का पिता है। यज्ञ भारत की एक मान्य एवं प्राचीनतम वैदिक उपासना है। धार्मिक एकता एवं भावनात्मक एकता को लाने के लिए ऐसे आयोजनों की सर्वमान्य साधना का आश्रय लेना सब प्रकार दूरदर्शितापूर्ण है।

गायत्री सद्बुद्धि की देवी और यज्ञ सत्कर्मों का पिता है। सद्भावनाओं एवं सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन के लिए गायत्री माता और यज्ञ पिता का युग्म हर दृष्टि से सफल एवं समर्थ सिद्ध हो सकता है। गायत्री यज्ञों की विधि-व्यवस्था बहुत ही सरल, लोकप्रिय एवं आकर्षक भी है। जगत् के दुर्बुद्धिग्रस्त जनमानस का संशोधन करने के लिए सद्बुद्धि की देवी गायत्री महामन्त्र की शक्ति एवं सामर्थ्य अद्भुत भी है और अद्वितीय भी।

नगर, ग्राम अथवा क्षेत्र की जनता को धर्म प्रयोजनों के लिए एकत्रित करने के लिए जगह-जगह पर गायत्री यज्ञों के आयोजन करने चाहिए। गलत ढंग से करने पर वे महँगे भी होते हैं और शक्ति की बरबादी भी बहुत करते हैं। यदि उन्हें विवेक-बुद्धि से किया जाए, तो कम खर्च में अधिक आकर्षक भी बन सकते हैं और उपयोगी भी बहुत हो सकते हैं।

अपने सभी कर्मकाण्डों, धर्मानुष्ठानों, संस्कारों, पर्वों में यज्ञ आयोजन मुख्य है। उसका विधि-विधान जान लेने एवं उनका प्रयोजन समझ लेने से उन सभी धर्म आयोजनों की अधिकांश आवश्यकता पूरी हो जाती है।

लोकमंगल के लिए, जन-जागरण के लिए, वातावरण के

परिशोधन के लिए स्वतंत्र रूप से भी यज्ञ आयोजन सम्पन्न किये जाते हैं। संस्कारों और पर्व-आयोजनों में भी उसी की प्रधानता है।

प्रत्येक भारतीय धर्मानुयायी को यज्ञ प्रक्रिया से परिचित होना ही चाहिए। इसी का वर्णन-विवेचन अगले पृष्ठों पर किया जा रहा है।

यज्ञ आयोजन की आवश्यक वस्तुएँ

(एक कुण्डीय हवन के लिए)

१- धातुपात्र- ८ तश्तरियाँ हवन सामग्री के लिए, १ बड़ा कटोरा घी होमने को, १ छोटा लोटा, ३ जल कलश ढक्कन सहित, दीपक के लिए कटोरी (एक पूजा दीप, एक आरती के लिए), ९ पंचपात्र, ९ चमची, १ बाल्टी हवन सामग्री के लिए, १ घृतपात्र, पूजा उपकरण रखने तथा इकट्ठा करने के लिए दो थाली, एक पूजन की वस्तुएँ डालने की तश्तरी (त्वष्टा), धूपदान, १ लोटा पानी का।

२- आरती का सामान- शंख, घड़ियाल, झाँझ, मंजीरा आदि।

३- फुटकर सामान- रँगा हुआ मिट्टी का बड़ा कलश। कपड़ा लपेटा हुआ नारियल। कलश के नीचे रखने का कपड़े का घेरा (इडली), मुख पर रखने हेतु आम्र पल्लव, गले में कलावा या माला।

४- काष्ठपात्र- प्रणीता, प्रोक्षणी, स्रुवा, स्रुचि तथा स्फ्य। प्रत्येक कुण्ड पर एक-एक पंखा एवं चिमटा।

५-आसन- ९ यज्ञकर्त्ताओं के लिए, एक कार्य प्रमुख के लिए, १ चौकी, १ दीपक बंद रखने की काँच की घेरे वाली पेटी, पंचदेव का शीशे में मढ़ा हुआ या लेमीनेशन किया चित्र। चौकी पर बिछाने का कपडा-पीला रँगा हुआ।

६- पूजा वस्तुएँ- चावल, रोली, अगरबत्ती, रुई-बत्ती, दियासलाई, कपूर, चन्दन काष्ठ तथा घिसने की चकली। पुष्प जितने

अधिक हो सकें। नैवेद्य, शक्कर की गोलियाँ तथा हाथ में बाँधने का कलावा, स्विष्टकृत् के लिए मिष्ठान्न तथा पूर्णाहुति के लिए गिरी का गोला या साबूत सुपारी, आरती के लिए आटे के दीपक, बत्ती घी समेत पाँच या अधिक संख्या में, यज्ञोपवीत उपस्थिति के अनुसार, गाय का दूध, दही, घी, शक्कर तथा तुलसी पत्र पंचामृत के लिए। यह सामान एक कुण्डीय यज्ञ के अनुसार है, पाँच कुण्डीय या नौ कुण्डीय यज्ञ में उसी अनुपात से अतिरिक्त सामान रखें।

७- पाँच चौकियाँ डेढ़-डेढ़ या दो-दो फुट लम्बी-चौड़ी, पाँचों पर बिछाने के कपड़े, ५ कलश पुते हुए, ५ नारियल लाल कपड़े से बँधे हुए, चौकी, रँगने के लिए पीला, लाल, हरा, काला रंग। जलयात्रा के लिए पुते हुए कलश स्थानीय आवश्यकतानुसार संख्या में।

आसन, पंचपात्र, चमची, यज्ञ के काष्ठपात्र, हवन सामग्री की तश्तरियाँ, घृतपात्र, ये वस्तुएँ कुण्डों के आधार पर बढ़ानी चाहिए।

***

संकेत विवरण

आश्व०गृ०सू०	-	आश्वलायन गृह्य सूत्र
मा०गृ०सू०	-	मानव गृह्य सूत्र
पा०गृ०सू०	-	पारस्कर गृह्य सूत्र
गो०गृ०सू०	-	गोभिल गृह्य सूत्र
लौ०स्मृ०	-	लौगाक्षि स्मृति
बृह०उ०	-	बृहदारण्यक उपनिषद्
अथर्व०	-	अथर्ववेद
गु०गी०	-	गुरु गीता
सं०प्र०	-	संध्या प्रयोग
तै०आ०	-	तैत्तिरीय आरण्यक

जिन मन्त्रों के नीचे केवल अंक लिखे हैं, वे यजुर्वेद के हैं।

॥ गुरु ईश वन्दना ॥

सर्वप्रथम गुरुसत्ता को नमन करते हुए हम प्रार्थना करते हैं कि वे हमें अपने निर्देशों-अनुशासनों को समझने और उसके अनुपालन की क्षमता प्रदान करें। माता सरस्वती हमारी वाणी को संयमी व परिष्कृत बनाये रखें। भगवान् वेदव्यास उत्तरदायित्वों के निर्वाह करने की सामर्थ्य प्रदान करें। सभी साधक-याजक हाथ जोड़कर बैठें।

गुरु- **ॐ ब्रह्मानन्दं परमसुखदं, केवलं ज्ञानमूर्तिं,**
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं, तत्त्वमस्यादि-लक्ष्यम् ॥१ ॥
एकं नित्यं विमलमचलं, सर्वधीसाक्षिभूतं,
भावातीतं त्रिगुणरहितं, सद्गुरुं तं नमामि ॥२ ॥
अखण्डानन्दबोधाय, शिष्यसंतापहारिणे।
सच्चिदानन्दरूपाय, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥३ ॥-गु.गी. ६७

सरस्वती-**लक्ष्मीर्मेधा धरापुष्टिः, गौरी तुष्टिः प्रभा धृतिः।**
एताभिः पाहि तनुभिः, अष्टाभिर्मां सरस्वति ॥१ ॥
सरस्वत्यै नमो नित्यं, भद्रकाल्यै नमो नमः।
वेद वेदान्तवेदाङ्ग, विद्यास्थानेभ्य एव च ॥२ ॥
मातस्त्वदीय-पदपंकज - भक्तियुक्ता,
ये त्वां भजन्ति निखिला-नपरान्विहाय।
ते निर्जरत्वमिह यान्ति कलेवरेण,
भूवह्निवायु-गगनाम्बु-विनिर्मितेन ॥३ ॥

व्यास- **व्यासाय विष्णुरूपाय, व्यासरूपाय विष्णवे।**
नमो वै ब्रह्मनिधये, वासिष्ठाय नमो नमः ॥१ ॥

नमोऽस्तु ते व्यास विशालबुद्धे, फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र।
येन त्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः।

-ब्र०पु० २४५.७.११

॥ साधनादिपवित्रीकरणम्॥

सत्कार्यों श्रेष्ठ उद्देश्यों के लिए यथा शक्ति साधन-माध्यम भी पवित्र रखने चाहिए। यज्ञ, संस्कार आदि कार्यों में जो उपकरण साधन-सामग्री प्रयुक्त हों, उनमें भी देवत्व का संस्कार जगाया जाता है। एक प्रतिनिधि जल पात्र लेकर खड़े हों, सभी साधन सामग्री के ऊपर जल का सिंचन करें। भावना करें सभी साधनों में पवित्रता का संचार हो रहा है।

ॐ पुनाति ते परिस्रुत ৺, सोम ৺ सूर्यस्य दुहिता।
वारेण शश्वता तना। -१९.४

ॐ पुनन्तु मा देवजनाः, पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि, जातवेदः पुनीहि मा। -१९.३९

ॐ यत्ते पवित्रमर्चिषि, अग्ने विततमन्तरा।
ब्रह्म तेन पुनातु मा॥ -१९.४१

ॐ पवमानः सो अद्य नः, पवित्रेण विचर्षणिः।
यः पोता स पुनातु मा। -१९.४२

ॐ उभाभ्यां देव सवितः, पवित्रेण सवेन च।
मां पुनीहि विश्वतः॥ -१९.४३

॥ मंगलाचरणम्॥

मुख्य याजक अक्षत पुष्प लेकर खड़े हों। सभी के ऊपर अक्षत पुष्प की वर्षा करें। सभी लोग भाव करें कि देवताओं का आशीर्वाद बरस रहा है। देवत्व के धारण तथा

निर्वाह करने की क्षमता का विकास हो रहा है।

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा, भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ꣳ सस्तनूभिः, व्यशेमहि देव हितं यदायुः॥

-२५.२१

॥ पवित्रीकरणम्॥

देव शक्तियाँ पवित्रता प्रिय हैं। उन्हें शरीर और मन से, आचरण और व्यवहार से शुद्ध मनुष्य ही प्रिय होते हैं। इसलिए यज्ञ जैसे देव प्रयोजन में संलग्न होते समय शरीर और मन को पवित्र बनाना पड़ता है। बायें हाथ में जल लेकर उसे दाहिने हाथ से ढक लें। अभिमन्त्रित जल समस्त शरीर पर छिड़क लें। भावना करें हम पवित्र हो रहे हैं।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं, स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।
ॐ पुनातु पुण्डरीकाक्षः, पुनातु पुण्डरीकाक्षः, पुनातु।

-वा०पु० ३३.६

॥ आचमनम्॥

वाणी, मन और अन्तःकरण की शुद्धि के लिए तीन बार आचमन किया जाता है, मन्त्रपूरित जल से तीनों को भाव स्नान कराया जाता है। हर मन्त्र के साथ एक आचमन किया जाए।

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा॥१॥
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा॥२॥
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि, श्रीः श्रयतां स्वाहा॥३॥

-आश्व०गृ०सू० १.२४, मा०गृ०सू० १.९

॥ शिखावन्दनम्॥

मस्तिष्क सद्विचारों का केन्द्र है। इसमें देव भाव ही प्रवेश

करने पाएँ। दाहिने हाथ की अँगुलियों को गीला कर शिखा में गाँठ लगाएँ अथवा शिखा स्थान का स्पर्श करें। भावना करें कि देवत्व को धारण करने योग्य प्रखरता, तेजस्विता का विकास हो रहा है।

ॐ चिद्रूपिणि महामाये, दिव्यतेजः समन्विते।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये, तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे॥ –सं.प्र.

॥ प्राणायामः ॥

दोनों हाथ गोद में रखते हुए दोनों नथुनों से श्वास खीचें, थोड़ी देर रोकें, पुनः बाहर निकाल दें। श्वास खींचने के साथ भावना करें कि संसार में व्याप्त प्राणशक्ति और श्रेष्ठता के तत्त्वों को श्वास द्वारा खींच रहे हैं। श्वास रोकते समय भावना करें कि वह प्राणशक्ति, दिव्यशक्ति तथा श्रेष्ठता अपने रोम-रोम में प्रवेश करके उसी में रम रही है। श्वास छोड़ते समय यह भावना करें कि जितने भी दुर्गुण अपने में थे, वे श्वास के साथ निकल कर बाहर चले गये।

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः, ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं, ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ।

–तै०आ० १०.२७

॥ न्यासः ॥

शरीर के अति महत्त्वपूर्ण अंगों में पवित्रता की भावना भरना, उनकी दिव्य चेतना को जाग्रत् करना न्यास का उद्‌देश्य है। बाएँ हाथ में जल लें, दाहिने हाथ की अँगुलियों को गीलाकर निर्देशित अंगों को बाएँ से दाएँ स्पर्श करते चलें। भावना करें सभी अंगों में देवत्व की स्थापना हो रही है।

ॐ वाङ् मे आस्येऽस्तु। (मुख को)

ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु। (नासिका के दोनों छिद्रों को)

ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु। (दोनों नेत्रों को)

ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। (दोनों कानों को)

ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु। (दोनों भुजाओं को)

ॐ ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु। (दोनों जंघाओं को)

ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गानि, तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।

(समस्त शरीर पर) -पा. गृ. सू. १.३.२५

॥ पृथ्वी-पूजनम् ॥

हम जहाँ से अन्न, जल, वस्त्र, ज्ञान तथा अनेक सुविधा-साधन प्राप्त करते हैं, वह मातृभूमि हमारी सबसे बड़ी आराध्या है। हमारे मन में माता के प्रति जैसी अगाध श्रद्धा होती है, वैसी ही मातृभूमि के प्रति भी रहनी चाहिए और मातृ-ऋण से उऋण होने के लिए अवसर ढूँढ़ते रहना चाहिए। अक्षत, पुष्प, जल से धरती माँ का पूजन करें अथवा धरती माँ को हाथ से स्पर्श करके नमस्कार करें। भावना करें कि धरती माता के दिव्य गुण हमें प्राप्त हो रहे हैं।

ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि! त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम् ॥ -सं०प्र०

॥ सङ्कल्पः ॥

सभी तक अक्षत पुष्प पहुँचा दें, सभी लोग दायें हाथ में रख लें। अपना लक्ष्य, उद्देश्य निश्चित होना चाहिए। उसकी घोषणा भी की जानी चाहिए। श्रेष्ठ कार्य घोषणापूर्वक किये जाते हैं, हीन कृत्य छिपकर करने का मन होता है। संकल्प करने से मनोबल बढ़ता है। मन के ढीलेपन के कुसंस्कार पर अंकुश लगता है, स्थूल घोषणा से सत्पुरुषों का तथा मन्त्रों द्वारा घोषणा से सत् शक्तियों का मार्गदर्शन और सहयोग मिलता है।

दायाँ हाथ ऊपर, बायाँ हाथ नीचे, कमर सीधी आँखें बन्द। प्रारम्भ में मन्त्र सुने जब दुहराने के लिए कहा जाय, तो दुहरायें।

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्‌भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य, अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीये परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे, वैवस्वतमन्वन्तरे, भूर्लोके, जम्बूद्वीपे, भारतवर्षे, भरतखण्डे, आर्यावर्त्तैकदेशान्तर्गते, ... क्षेत्रे, ... स्थले..........विक्रमाब्दे .... संवत्सरे मासानां मासोत्तमेमासे .... मासे .... पक्षे .... तिथौ .... वासरे .... गोत्रोत्पन्नः .... नामाऽहं सत्प्रवृत्ति-संवर्द्धनाय, दुष्प्रवृत्ति-उन्मूलनाय, लोककल्याणाय, आत्मकल्याणाय, वातावरण-परिष्काराय, उज्ज्वलभविष्य कामनापूर्तये च प्रबलपुरुषार्थं करिष्ये, अस्मै प्रयोजनाय च कलशादि-आवाहितदेवता- पूजनपूर्वकम् .... कर्मसम्पादनार्थं सङ्कल्पम् अहं करिष्ये।

॥ यज्ञोपवीतपरिवर्तनम् ॥

यज्ञोपवीत को व्रतबन्ध भी कहते हैं। यह व्रतशील जीवन के उत्तरदायित्व का बोध कराने वाला पुण्य प्रतीक है। यज्ञोपवीत को दोनों हाथ की अंजलि में रख लें। जल से अभिसिंचन करें। गायत्री मंत्र बोलते हुए भाव करें कि इसके अन्दर जो भी कुसंस्कार है, उनकी धुलाई हो रही है।

॥ यज्ञोपवीतधारणम् ॥

नया यज्ञोपवीत धारण करते हुए भावना करें कि हम गायत्री की प्रतिमा को धारण कर रहे हैं।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं, प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं, यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः।

–पार०गृ०सू० २.२.११

॥ जीर्णोपवीत विसर्जनम्॥

पुराना यज्ञोपवीत बाहर निकाल दें।

ॐ एतावद्दिनपर्यन्तं, ब्रह्म त्वं धारितं मया।
जीर्णत्वात्ते परित्यागो, गच्छ सूत्र यथा सुखम्॥

॥ चन्दनधारणम्॥

सभी तक चन्दन या रोली पहुँचा दें। सभी लोग दाएँ हाथ की अनामिका अँगुली में लगा लें। मस्तिष्क को शान्त, शीतल एवं सुगन्धित रखने की आवश्यकता का स्मरण कराने के लिए चन्दन धारण किया जाता है। अन्तःकरण में ऐसी सद्भावनाएँ भरी होनी चाहिए, जिनकी सुगन्ध से अपने को सन्तोष एवं दूसरों को आनन्द मिले।

मन्त्र के साथ एक दूसरे के मस्तक पर चन्दन या रोली लगायें। भावना करें कि जिस महाशक्ति ने चन्दन को शीतलता-सुगन्धि दी है, उसी की कृपा से हमें भी वे तत्त्व मिल रहे हैं, जिनके आधार पर हम चन्दन की तरह ईश्वर सान्निध्य के अधिकारी बन सकें।

ॐ चन्दनस्य महत्पुण्यं, पवित्रं पापनाशनम्।
आपदां हरते नित्यं, लक्ष्मीस्तिष्ठति सर्वदा॥

॥ रक्षासूत्रम्॥

कलावा सभी तक पहुँचा दें। यह वरण सूत्र है। पुरुषों तथा अविवाहित कन्याओं के दायें हाथ में तथा महिलाओं के बायें हाथ में बाँधा जाता है। जिस हाथ में कलावा बाँधे, उसकी मुट्ठी बँधी हो, दूसरा हाथ सिर पर हो। इस पुण्य कार्य के लिए व्रतशील

बनकर उत्तरदायित्व स्वीकार करने का भाव रखा जाए।

ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति, दीक्षयाऽऽप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति, श्रद्धया सत्यमाप्यते॥ -१९.३०

॥ कलशपूजनम् ॥

यह कलश विश्व ब्रह्माण्ड का, विराट् ब्रह्म का, भू पिण्ड (ग्लोब) का प्रतीक है। इसे शान्ति और सृजन का सन्देशवाहक कह सकते हैं। सम्पूर्ण देवता कलशरूपी पिण्ड या ब्रह्माण्ड में एक साथ समाये हुए हैं। कोई एक प्रतिनिधि अक्षत पुष्प लेकर कलश का पूजन करें, शेष सभी साधक भावनापूर्वक हाथ जोड़ें।

ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानः, तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश ᳪ, समानऽआयुः प्रमोषीः।
-१८.४९

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य, बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं, यज्ञᳪ समिमं दधातु। विश्वेदेवासऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ।
ॐ वरुणाय नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि।
-२.१३

गन्धाक्षतं पुष्पाणि, धूपं दीपं नैवेद्यं समर्पयामि।
ॐ कलशस्थ देवताभ्यो नमः।

॥ कलश-प्रार्थना ॥

हाथ जोड़कर कलश में प्रतिष्ठित देवताओं की प्रार्थना करें।

ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः, कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा, मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥१॥
कुक्षौ तु सागराः सर्वे, सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः, सामवेदो ह्यथर्वणः ॥२॥

अंगैश्च संहिताः सर्वे, कलशन्तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री, शान्ति - पुष्टिकरी सदा ॥३ ॥
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि, त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।
शिवः स्वयं त्वमेवासि, विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः ॥४ ॥
आदित्या वसवो रुद्रा, विश्वेदेवाः सपैतृकाः।
त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि, यतः कामफलप्रदाः ॥५ ॥
त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं, कर्तुमीहे जलोद्भव।
सान्निध्यं कुरु मे देव! प्रसन्नो भव सर्वदा ॥६ ॥

॥ दीपपूजनम् ॥

दीपक सर्वव्यापी चेतना का प्रतीक है। उस महाचेतन ज्योतिरूप, परम प्रकाश का पूजन, आराधन दीपक के माध्यम से करें।

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा। सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा। अग्निर्वर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा। सूर्यो वर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा। ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा। -३.९

॥ देवावाहनम् ॥

देव शक्तियाँ-आदि शक्ति की, परब्रह्म की विभिन्न धाराएँ हैं। सृष्टि सन्तुलन व्यवस्था के लिए इस विराट् सत्ता की विभिन्न चेतन धाराएँ विभिन्न उत्तरदायित्व सँभालती हैं। उन्हें ही देव शक्तियाँ कहा जाता है।

सर्वप्रथम गुरु चेतना का आवाहन करते हैं। परमात्मा की दिव्य चेतना का वह अंश जो साधकों का मार्गदर्शन और सहयोग करने के लिए व्यक्त होता है। गुरुसत्ता का ध्यान, भावभरा आवाहन कं ।

ॐ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः, गुरुरेव महेश्वरः।
गुरुरेव परब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥१ ॥

अखण्डमण्डलाकारं, व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥२॥ -गु०गी० ४३,४५
मातृवत् लालयित्री च, पितृवत् मार्गदर्शिका।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै, श्रद्धा-प्रज्ञायुता च या ॥३॥
ॐ श्री गुरवे नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि।

गायत्री- वेदमाता, देवमाता, विश्वमाता; सद्ज्ञान, सद्भाव की अधिष्ठात्री सृष्टि की आदि कारण मातेश्वरी गायत्री का ध्यान, भावभरा आवाहन करें।

ॐ आयातु वरदे देवि! त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि।
गायत्रिच्छन्दसां मातः, ब्रह्मयोने नमोऽस्तु ते ॥४॥ -सं०प्र०
ॐ श्री गायत्र्यै नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि।
ततो नमस्कारं करोमि।
ॐ स्तुता मया वरदा वेदमाता, प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं, कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्। -अथर्व० १९.७१.१

अब विभिन्न देव शक्तियों का आवाहन करते हैं। मन्त्र में वर्णित देव शक्तियों का ध्यान, भाव भरा नमन करते चलें।

गणेश- अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं, पूजितो यः सुरासुरैः।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै, गणाधिपतये नमः ॥५॥
गौरी- सर्वमङ्गलमांगल्ये, शिवे सर्वार्थसाधिके!
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि, नारायणि! नमोऽस्तु ते ॥६॥
हरि- शुक्लाम्बरधरं देवं, शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्, सर्वविघ्नोपशान्तये ॥७॥

सर्वदा सर्वकार्येषु, नास्ति तेषाममंगलम्।
येषां हृदिस्थो भगवान्, मंगलायतनो हरिः ॥८॥
सप्तदेव- विनायकं गुरुं भानुं, ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान्।
सरस्वतीं प्रणौम्यादौ, शान्तिकार्यार्थसिद्धये ॥९॥
पुण्डरीकाक्ष- मंगलं भगवान् विष्णुः, मंगलं गरुडध्वजः।
मंगलं पुण्डरीकाक्षो, मंगलायतनो हरिः ॥१०॥
ब्रह्मा- त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा, सत्यलोकपितामहः।
आगच्छ मण्डले चास्मिन्, मम सर्वार्थसिद्धये ॥११॥
विष्णु- शान्ताकारं भुजगशयनं, पद्मनाभं सुरेशं,
विश्वाधारं गगनसदृशं, मेघवर्णं शुभांगम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं, योगिभिर्ध्यानगम्यं,
वन्दे विष्णुं भवभयहरं, सर्वलोकैकनाथम् ॥१२॥
शिव- वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं, वन्दे जगत्कारणम्,
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं, वन्दे पशूनाम्पतिम्।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं, वन्दे मुकुन्दप्रियम्,
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं, वन्दे शिवं शंकरम् ॥१३॥
त्र्यम्बक- ॐ त्र्यम्बकं यजामहे, सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्, मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥१४॥ ३.६०
दुर्गा- दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः,
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या,
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥१५॥
सरस्वती- शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमाम्, आद्यां जगद्व्यापिनीं,

वीणापुस्तकधारिणीमभयदां, जाड्यान्धकारापहाम्।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं, पद्मासने संस्थिताम्,
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं, बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥१६ ॥

लक्ष्मी- आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं, सुवर्णां हेममालिनीम्।
सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं, जातवेदो मऽआवह ॥१७ ॥

काली- कालिकां तु कलातीतां, कल्याणहृदयां शिवाम्।
कल्याणजननीं नित्यं, कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥१८ ॥

गंगा- विष्णुपादाब्जसम्भूते, गङ्गे त्रिपथगामिनि।
धर्मद्रवेति विख्याते, पापं मे हर जाह्नवि ॥१९ ॥

तीर्थ- पुष्करादीनि तीर्थानि, गंगाद्याः सरितस्तथा।
आगच्छन्तु पवित्राणि, पूजाकाले सदा मम ॥२० ॥

नवग्रह- ब्रह्मामुरारिस्त्रिपुरान्तकारी, भानुः शशीभूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः,सर्वेग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु ॥२१ ॥

षोडशमातृका- गौरी पद्मा शची मेधा, सावित्री विजया जया।
देवसेना स्वधा स्वाहा, मातरो लोकमातरः ॥२२ ॥
धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिः, आत्मनः कुलदेवता।
गणेशेनाधिका ह्येता, वृद्धौ पूज्याश्च षोडश ॥२३ ॥

सप्तमातृका- कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा, सिद्धिः प्रज्ञा सरस्वती।
मांगल्येषु प्रपूज्याश्च, सप्तैता दिव्यमातरः ॥२४ ॥

वास्तुदेव- नागपृष्ठसमारूढं, शूलहस्तं महाबलम्।
पातालनायकं देवं, वास्तुदेवं नमाम्यहम् ॥२५ ॥

क्षेत्रपाल- क्षेत्रपालान्नमस्यामि, सर्वारिष्टनिवारकान्।
अस्य यागस्य सिद्ध्यर्थं, पूजयाराधितान् मया ॥२६ ॥

॥ सर्वदेवनमस्कारः ॥

नमस्कार का उद्देश्य देव शक्तियों का सम्मान, उनके प्रति अपनी श्रद्धा का प्रकटीकरण तो है ही, अपने मन का, रुचि का झुकाव देवत्व की ओर करना भी है। दोनों हाथ जोड़ें, नमः के साथ सिर झुकाते हुए प्रणाम करें।

ॐ सिद्धि बुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणाधिपतये नमः।
ॐ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः।
ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः।
ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः।
ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः।
ॐ मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः।
ॐ कुलदेवताभ्यो नमः।
ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः।
ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः।
ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः।
ॐ वास्तुदेवताभ्यो नमः।
ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः।
ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः।
ॐ सर्वेभ्यस्तीर्थेभ्यो नमः।
ॐ एतत्कर्म-प्रधान-श्रीगायत्रीदेव्यै नमः।
ॐ पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु।

॥ षोडशोपचारपूजनम् ॥

देवताओं को पदार्थों की भूख नहीं है, पदार्थों के समर्पण द्वारा जो भावना, श्रद्धा व्यक्त होती है, देवता उसी से सन्तुष्ट होते हैं। यह

ध्यान में रखकर अच्छे पदार्थ देकर देवताओं पर एहसान का भाव नहीं आने देना चाहिए। श्रद्धा-समर्पण को प्रमुख मानकर उसे बनाये रखना आवश्यक है। पूजन के समय एक प्रतिनिधि पूजन करें, शेष सभी याजक हाथ जोड़कर नमन करें।

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। आवाहयामि, स्थापयामि॥१॥ आसनं समर्पयामि॥२॥ पाद्यं समर्पयामि॥३॥ अर्घ्यं समर्पयामि॥४॥ आचमनम् समर्पयामि॥५॥ स्नानम् समर्पयामि॥६॥ वस्त्रम् समर्पयामि॥७॥ यज्ञोपवीतम् समर्पयामि॥८॥ गन्धम् विलेपयामि॥९॥ अक्षतान् समर्पयामि॥१०॥ पुष्पाणि समर्पयामि॥११॥ धूपम् आघ्रापयामि ॥१२॥ दीपम् दर्शयामि॥१३॥ नैवेद्यं निवेदयामि॥१४॥ ताम्बूलपूगीफलानि समर्पयामि॥१५॥ दक्षिणां समर्पयामि॥१६॥ सर्वाभावे अक्षतान् समर्पयामि॥

ततो नमस्कारम् करोमि-

ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये, सहस्त्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्त्रकोटीयुगधारिणे नमः॥

॥ स्वस्तिवाचनम्॥

सभी याजकों तक अक्षत पुष्प पहुँचा दें। सभी दाएँ हाथ में रख लें। स्वस्ति- कल्याणकारी, हितकारी के तथा वाचन-घोषणा के अर्थों में प्रयुक्त होता है। वाणी से, उपकरणों से स्थूल जगत् में घोषणा होती है। मन्त्रों के माध्यम से सूक्ष्म जगत् में अपनी भावना का प्रवाह भेजा जाता है। सात्त्विक शक्तियाँ हमारे ईमान, हमारे कल्याणकारी भावों द्वारा अनुकूल वातावरण पैदा करें। दायाँ हाथ ऊपर, बायाँ नीचे, कमर सीधी, आँखें बन्द रखें।

ॐ गणानां त्वा गणपति ꣳ हवामहे, प्रियाणां त्वा प्रियपति ꣳ हवामहे, निधीनां त्वा निधिपति ꣳ हवामहे, वसोमम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्॥ -२३.१९

ॐ स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः, स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यौऽअरिष्टनेमिः, स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु। - २५.१९

ॐ पयः पृथिव्यां पयऽओषधीषु, पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥

ॐ विष्णो रराटमसि विष्णोः, श्नप्त्रे स्थो विष्णोः, स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि, वैष्णवमसि विष्णवे त्वा॥ -५.२१

ॐ अग्निर्देवता वातो देवता, सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता, वसवो देवता रुद्रा देवता, ऽऽदित्या देवता मरुतो देवता, विश्वेदेवा देवता, बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता, वरुणो देवता॥ -१४.२०

ॐ द्यौः शान्तिरिक्ष ꣳ शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः, शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः, शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ꣳ शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि॥ -३६.१७

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्नऽआ सुव।

ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः॥ सर्वारिष्टसुशान्तिर्भवतु। -३०.३

अक्षत पुष्प मस्तक से लगा लें। मंत्र पूरा होने पर पूजा सामग्री सबके हाथों से लेकर एक तश्तरी में इकट्ठी कर ली जाए तथा पूजा वेदी पर समर्पित कर दी जाए।

॥ रक्षाविधानम्॥

मुख्य यजमान बाएँ हाथ में अक्षत लेकर खड़े हो जाएँ। दसों दिशाओं में विघ्नकारी तत्त्व हो सकते हैं, उनकी ओर दृष्टि रखने, उन पर प्रहार करने की तैयारी के रूप में सभी दिशाओं में मन्त्र पूरित अक्षत फेंके जाते हैं। भगवान से उन दुष्टों से लड़ने की शक्ति की

याचना भी इस क्रिया-कृत्य में सम्मिलित है। जिस दिशा की रक्षा का मन्त्र बोला जाए, उसी ओर अक्षत फेकें ।

ॐ पूर्वे रक्षतु वाराहः, आग्नेय्यां गरुडध्वजः।
दक्षिणे पद्मनाभस्तु, नैर्ऋत्यां मधुसूदनः ॥१ ॥
पश्चिमे चैव गोविन्दो, वायव्यां तु जनार्दनः।
उत्तरे श्रीपती रक्षेद्, ऐशान्यां हि महेश्वरः ॥२ ॥
ऊर्ध्वं रक्षतु धाता वो, ह्यधोऽनन्तश्च रक्षतु।
अनुक्तमपि यत् स्थानं, रक्षत्वीशो ममाद्रिधृक् ॥३ ॥
अपसर्पन्तु ते भूता, ये भूता भूमिसंस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारः, ते गच्छन्तु शिवाज्ञया ॥४ ॥
अपक्रामन्तु भूतानि, पिशाचाः सर्वतो दिशम्।
सर्वेषामविरोधेन, यज्ञकर्म समारभे ॥५ ॥

॥ अग्निस्थापनम् ॥

समिधाओं को ठीक से लगा लें। कपूर या घी में डूबी मोटी बत्ती बीच में रख लें। मन्त्र के साथ अग्नि स्थापन करें। यज्ञाग्नि को ब्रह्म का प्रतिनिधि मानकर वेदी पर उसकी प्राण-प्रतिष्ठा करते हैं। उसी भाव से अग्नि की स्थापना का विधान सम्पन्न करते हैं। जब कुण्ड में प्रथम अग्नि-ज्योति के दर्शन हों, तब सब लोग उन्हें नमस्कार करें। एक प्रतिनिधि अक्षत-पुष्प आदि से अग्निदेवता की पूजा करें।

ॐ भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना, पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि, पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे। अग्निं दूतं पुरोदधे, हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँऽआसादयादिह। -३.५, २२.१७

ॐ अग्नये नमः। आवाहयामि, स्थापयामि, ध्यायामि। गन्धाक्षतम्, पुष्पाणि, धूपम्, दीपम्, नैवेद्यम् समर्पयामि।

॥ गायत्री स्तवनम् ॥

इस स्तवन में गायत्री महामन्त्र के अधिष्ठाता सविता देवता की प्रार्थना है। इसे अग्नि का अभिवन्दन, अभिनन्दन भी कह सकते हैं। सभी लोग हाथ जोड़कर स्तवन की मूल भावना को हृदयगंम करें। हर टेक में कहा गया है- 'वह वरण करने योग्य सविता देवता हमें पवित्र करें।' दिव्यता-पवित्रता के संचार की पुलकन का अनुभव करते चलें।

यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालम्, रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम्।
दारिद्र्य-दुःखक्षयकारणं च, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१ ॥

शुभ ज्योति के पुंज, अनादि, अनुपम। ब्रह्माण्ड व्यापी आलोक कर्त्ता।
दारिद्र्य, दुःख भय से मुक्त कर दो। पावन बना दो हे देव सविता ॥१ ॥

यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितम्, विप्रैः स्तुतं मानवमुक्तिकोविदम्।
तं देवदेवं प्रणमामि भर्गं, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥२ ॥

ऋषि देवताओं से नित्य पूजित। हे भर्ग! भव बन्धन मुक्ति कर्त्ता।
स्वीकार कर लो वन्दन हमारा। पावन बना दो हे देव सविता ॥२ ॥

यन्मण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं, त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम्।
समस्त-तेजोमय-दिव्यरूपं, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥३ ॥

हे ज्ञान के घन, त्रैलोक्य पूजित। पावन गुणों के विस्तार कर्त्ता।
समस्त प्रतिभा के आदि कारण। पावन बना दो हे देव सविता ॥३ ॥

यन्मण्डलं गूढमतिप्रबोधं, धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम्।
यत् सर्वपापक्षयकारणं च, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥४ ॥

हे गूढ़ अन्तःकरण में विराजित। तुम दोष-पापादि संहार कर्त्ता।
शुभ धर्म का बोध हमको करा दो। पावन बना दो हे देव सविता ॥४ ॥

यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं, यदृग्-यजुः सामसु सम्प्रगीतम्।
प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥५ ॥

हे व्याधि-नाशक, हे पुष्टि दाता। ऋग् साम यजु वेद संचार कर्त्ता।
हे भूर्भुवः स्वः में स्व प्रकाशित। पावन बना दो हे देव सविता ॥५ ॥

यन्मण्डलं वेदविदो वदन्ति, गायन्ति यच्चारण- सिद्धसङ्घाः।
यद्योगिनो योगजुषां च सङ्घाः, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥६ ॥

सब वेदविद्, चारण, सिद्ध योगी। जिसके सदा से हैं गान कर्त्ता।
हे सिद्ध सन्तों के लक्ष्य शाश्वत्। पावन बना दो हे देव सविता ॥६ ॥

यन्मण्डलं सर्वजनेषु पूजितं, ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके।
यत्काल-कालादिमनादिरूपम्, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥७ ॥

हे विश्व मानव से आदि पूजित। नश्वर जगत् में शुभ ज्योति कर्त्ता।
हे काल के काल-अनादि ईश्वर। पावन बना दो हे देव सविता ॥७ ॥

यन्मण्डलं विष्णुचतुर्मुखास्यं, यदक्षरं पापहरं जनानाम्।
यत्कालकल्पक्षयकारणं च, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥८ ॥

हे विष्णु ब्रह्मादि द्वारा प्रचारित। हे भक्त पालक, हे पाप हर्त्ता।
हे काल-कल्पादि के आदि स्वामी। पावन बना दो हे देव सविता ॥८ ॥

यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्धं, उत्पत्ति-रक्षा प्रलयप्रगल्भम्।
यस्मिन् जगत्संहरतेऽखिलं च, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥९ ॥

हे विश्व मण्डल के आदि कारण। उत्पत्ति-पालन-संहार कर्त्ता।
होता तुम्हीं में लय यह जगत् सब। पावन बना दो हे देव सविता ॥९ ॥

यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णोः, आत्मा परंधाम विशुद्धतत्त्वम्।
सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥१० ॥

हे सर्वव्यापी, प्रेरक नियन्ता। विशुद्ध आत्मा, कल्याण कर्त्ता।
शुभ योग पथ पर हमको चलाओ। पावन बना दो हे देव सविता ॥१० ॥

यन्मण्डलं ब्रह्मविदो वदन्ति, गायन्ति यच्चारण-सिद्धसंघाः।
यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥११ ॥

हे ब्रह्मनिष्ठों से आदि पूजित। वेदज्ञ जिसके गुणगान कर्त्ता।
सद्‌भावना हम सबमें जगा दो। पावन बना दो हे देव सविता॥११॥

यन्मण्डलं वेद- विदोपगीतं, यद्योगिनां योगपथानुगम्यम्।
तत्सर्ववेदं प्रणमामि दिव्यं, पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥१२॥

हे योगियों के शुभ मार्गदर्शक। सद्ज्ञान के आदि संचारकर्त्ता।
प्रणिपात स्वीकार लो हम सभी का। पावन बना दो हे देव सविता॥१२॥

॥ अग्नि प्रदीपनम् ॥

जलती हुई प्रदीप्त अग्नि में ही आहुति दी जाती है। अतः अग्निदेव को प्रदीप्त करें। भाव करें हमारा जीवन दीप्तिमान्, ज्वलनशील, प्रचण्ड, प्रखर और प्रकाशमान बनें।

ॐ उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि, त्वमिष्टापूर्ते स ७ सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्, विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।

-१५.५४, १८.६१

॥ समिधाधानम् ॥

जीवन साधना के चार चरण हैं- १.उपासना, २. स्वाध्याय, ३. संयम व ४. सेवा। इन्हीं के माध्यम से जीवन उत्कृष्टता-महानता की ओर बढ़ता है। चार समिधाओं को समर्पित करते समय यही भावना रखें कि हम इन चारों चरणों का जीवन भर पालन करेंगे। एक-एक समिधा लें, मध्य में अनामिका-मध्यमा, अँगुष्ठ से पकड़ें, दोनों सिरे घी में डुबाएँ , स्वाहा के साथ समर्पित करें।

१-ॐ अयन्त इध्म आत्मा, जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व। चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया, पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन, अन्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदं अग्नये जातवेदसे इदं न मम। -आश्व०गृ०सू० १.१०

२- ॐ समिधाऽग्निं दुवस्यत, घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन्

हव्या जुहोतन स्वाहा। इदं अग्नये इदं न मम॥

३- ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे, घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदं अग्नये जातवेदसे इदं न मम॥

४- ॐ तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो, घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा। इदं अग्नये अंगिरसे इदं न मम॥ -३.१.३

आज्याहुति के लिए कटोरी में रखा हुआ घृत अग्नि के पास रखकर गरम कर लें।

॥ जलप्रसेचनम् ॥

प्रोक्षणी पात्र में जल लेकर निर्देशित मन्त्रों से वेदी के बाहर चारों दिशाओं में डालें। भावना करें कि अग्नि के चारों ओर शीतलता का घेरा बना रहे हैं, जिसका परिणाम शान्तिदायी होगा।

ॐ अदितेऽनुमन्यस्व॥ (इति पूर्वे)

ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व॥ (इति पश्चिमे)

ॐ सरस्वत्यनुमन्यस्व॥ (इति उत्तरे) -गो०गृ०सू० १.३.१-३

ॐ देव सवितः प्रसुव यज्ञं, प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः, केतं नः पुनातु, वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥

(इति चतुर्दिक्षु) -११.७

॥ आज्याहुतिः ॥

घृत का दूसरा नाम स्नेह है। स्नेह अर्थात् प्रेम, सहानुभूति, सेवा, संवेदना, दया, क्षमा, ममता, आत्मीयता, करुणा, उदारता, वात्सल्य जैसे सद्गुण इस प्रेम के साथ जुड़े हुए हैं। निःस्वार्थ भाव से उच्च आदर्शों के साथ जो साधमा सम्पन्न की जाती है, उसे दिव्य प्रेम कहते

हैं। यह दिव्य प्रेम, स्नेह-घृत यदि यज्ञ-परमार्थ के साथ जोड़ दिया जाए, तो वह देवताओं को प्रसन्न करने वाला बन जाता है। स्रुवा को घृत में डुबो लें। स्वाहा के साथ अग्नि में समर्पित करें। स्रुवा लौटाते समय बचा हुआ घृत प्रणीता पात्र के जल में टपकाते चलें।

१- ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम॥ -१८.२८

२- ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय इदं न मम॥

३- ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये इदं न मम॥

४- ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदं न मम॥ -२२.२७

५- ॐ भूः स्वाहा। इदं अग्नये इदं न मम॥

६- ॐ भुवः स्वाहा। इदं वायवे इदं न मम॥

७- ॐ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय इदं न मम॥ -गो.गृ.सू. १.८.१५

॥ गायत्रीमन्त्राहुतिः ॥

जिस प्रकार अति सम्माननीय अतिथि को प्रेमपूर्वक भोजन परोसा जाता है, उसी प्रकार श्रद्धा-भक्ति और सम्मान की भावना के साथ अग्निदेव के मुख में आहुतियाँ दी जानी चाहिए। अनामिका, मध्यमा व अंगुष्ठ के सहारे हवन सामग्री लें हथेली ऊपर की दिशा में रखते हुए, गायत्री मंत्र सस्वर ऊँची आवाज में बोलते हुए कुण्ड के बीचो-बीच आहुतियाँ एक साथ समर्पित करें।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो नः प्रचोदयात्, स्वाहा। इदं गायत्र्यै इदं न मम॥ -३६.३

<u>**नोट**</u>- *आवश्यकतानुसार (जन्मदिन, विवाह दिन आदि के अवसर पर) दीर्घ जीवन, उज्ज्वल भविष्य एवं सर्वतोभावेन कल्याण के लिए तीन बार या पाँच बार महामृत्युञ्जय मन्त्र से आहुति प्रदान की जा सकती है।*

॥ महामृत्युञ्जय मंत्राहुतिः ॥

ॐ त्र्यंबकं यजामहे, सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्, मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्, स्वाहा॥
इदं महामृत्युञ्जयाय इदं न मम॥ -३.६०

॥ स्विष्टकृत्होमः ॥

यह प्रायश्चित आहुति भी कहलाती है। आहुतियों में जो कुछ भूल रही हो, उसकी पूर्ति के लिए तथा यज्ञाग्नि के लिए नैवेद्य समर्पण के रूप में यह कृत्य किया जाता है। एक प्रतिनिधि स्रुचि में मिष्टान्न भर लें, स्वाहा के साथ स्विष्टकृत् आहुति अपने स्थान पर बैठे हुए करें।

ॐ यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं, यद्वान्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते, सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां, समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा। इदं अग्नये स्विष्टकृते इदं न मम॥

-आश्व. गृ. सू. १.१०

॥ देवदक्षिणा-पूर्णाहुतिः ॥

यज्ञ से उत्पन्न ऊर्जा का, यज्ञ भगवान के आशीर्वाद का उपयोग हीन प्रवृत्तियों के विनाश के लिए करना चाहिए। इसके लिए अपने किसी दोष-दुर्गुण के त्याग तथा किसी सद्गुण को अपनाने का संकल्प मन में करना चाहिए। सब लोग खड़े हों। सभी के हाथ में एक-एक चुटकी हवन सामग्री हो। एक प्रतिनिधि स्रुचि पात्र में सुपारी या नारियल का गोला लें, स्वाहा के साथ आहुति दें।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते॥ -बृह. उ. ५.१.१

ॐ पूर्णादर्वि परापत, सुपूर्णा पुनरापत।
वस्नेव विक्रीणा वहा, इषमूर्ज ꣳशतक्रतो स्वाहा॥
ॐ सर्वं वै पूर्ण ꣳस्वाहा॥ -३.४९

॥ वसोर्धारा ॥

अक्सर शुभ कार्यों के प्रारम्भ में सब लोग बहुत साहस, उत्साह दिखाते हैं; पर पीछे ठण्डे पड़ जाते हैं। मनस्वी लोगों की नीति दूसरी ही है। वे यदि धर्म मार्ग पर कदम बढ़ा देते हैं, तो हर कदम पर अधिक तेजी का परिचय देते हैं। स्रुचि में घृत भर लें, मन्त्र के साथ कुण्ड में घृत की धार छोड़ें। भावना करें कि यज्ञ भगवान् सत्कृत्यों में अविरल स्नेह की धार चढ़ाने की प्रवृत्ति और क्षमता हमें प्रदान कर रहे हैं।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं, वसोः पवित्रमसि सहस्त्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः, पवित्रेण शतधारेण सुप्वा, कामधुक्षः स्वाहा। -१.३

॥ नीराजनम् - आरती ॥

थाली में पुष्पादि से सजाकर आरती जलाएँ, तीन बार जल घुमाकर यज्ञ भगवान् व देव प्रतिमाओं की आरती उतारें। आरती उतारने का तात्पर्य है कि यज्ञ भगवान् का सम्मान, परमार्थ परायणता का ज्ञान प्रकाश दसों दिशाओं में फैले, सर्वत्र उसी का शंख बजे, घण्टा-निनाद सुनाई पड़े और हर धर्मप्रेमी इस प्रयोजन के लिए उठ खड़ा हो। सभी लोग खड़े हों। देवशक्तियों की आरती करें।

ॐ यं ब्रह्मवेदान्तविदो वदन्ति, परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये।
विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा, तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय॥

ॐ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः, स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैः,
वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैः, गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थित-तद्गतेन मनसा, पश्यन्ति यं योगिनो,
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः, देवाय तस्मै नमः॥

॥ घृतावघ्राणम्॥

घृत आहुतियों से बचने पर टपकाया हुआ घृत, जल भरे प्रणीता पात्र में है। सभी उपस्थित लोगों तक पहुँचा दें। इस जल मिश्रित घृत में दाहिने हाथ की अँगुलियों के अग्रभाग को डुबोते जाएँ और दोनों हथेलियों पर मल लें। मन्त्र बोलते समय दोनों हाथ यज्ञ कुण्ड की ओर इस तरह रखें, मानों उन्हें तपाया जा रहा हो। मन्त्र समाप्ति पर गायत्री मन्त्र बोलते हुए उसे सूँघें एवं मुख आदि में मल लें। भाव करें कि यज्ञीय ऊर्जा को आत्मसात् कर रहे हैं।

ॐ तनूपा अग्नेऽसि, तन्वं मे पाहि।
ॐ आयुर्दा अग्नेऽसि, आयुर्मे देहि॥
ॐ वर्चोदा अग्नेऽसि, वर्चो मे देहि।
ॐ अग्ने यन्मे तन्वाऽ, ऊनन्तन्मऽआपृण॥
ॐ मेधां मे देवः, सविता आदधातु।
ॐ मेधां मे देवी, सरस्वती आदधातु॥
ॐ मेधां मे अश्विनौ, देवावाधत्तां पुष्करस्त्रजौ।

– पा० गृ० सू० २.४.७-८

॥ भस्मधारणम्॥

मृत्यु कभी भी आ सकती है और इस सुन्दर शरीर को देखते-देखते भस्म की ढेरी बना सकती है। यह बात मस्तिष्क में

भली प्रकार बिठा लेने के लिए यज्ञ भस्म लगाई जाती है।

स्फय को गीलाकर उसकी पीठ पर भस्म लगा लें और वह भस्म सभी लोग अनामिका अँगुली में लेकर मन्त्र में बताए हुए स्थानों पर क्रमशः लगाते चलें।

ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः, इति ललाटे। (मस्तक पर)

ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्, इति ग्रीवायाम्। (कंठ में)

ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्, इति दक्षिणबाहुमूले। (दाहिने कंधे पर)

ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्, इति हृदि। (हृदय पर) -३.६२

॥ क्षमा प्रार्थना ॥

यज्ञ कार्य के विधि-विधान में कोई त्रुटि हो गयी हो, साथियों के प्रति कुछ अनुचित व्यवहार बन पड़ा हो, तो इन सबके लिए देव-शक्तियों एवं व्यक्तियों से क्षमा याचना कर लेने से जहाँ अपना जी हल्का होता है, सामने वाली की नाराजगी भी दूर हो जाती है। दोनों हाथ जोड़ें, क्षमा प्रार्थना करें।

ॐ आवाहनं न जानामि, नैव जानामि पूजनम्।
विसर्जनं न जानामि, क्षमस्व परमेश्वर!॥१॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं सुरेश्वर।
यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे॥२॥
यदक्षरपदभ्रष्टं, मात्राहीनं च यद् भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव! प्रसीद परमेश्वर! ॥३॥
यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या, तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति, सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥४॥
प्रमादात्कुर्वतां कर्म, प्रच्यवेताध्वरेषु यत्।
स्मरणादेव तद्विष्णोः, सम्पूर्णं स्यादितिश्रुतिः॥५॥

॥ साष्टांगनमस्कारः ॥

सर्वव्यापी विराट् ब्रह्म को-विश्व ब्रह्माण्ड को भगवान् का दृश्य रूप मानकर नमस्कार करें।

ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्रमूर्तये, सहस्त्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्त्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्त्रकोटीयुगधारिणे नमः॥

॥ शुभकामना ॥

सबके कल्याण में अपना कल्याण समाया हुआ है। परमार्थ में स्वार्थ जुड़ा हुआ है, यह मान्यता रखते हुए हमें सर्वमङ्गल.की, लोककल्याण की आकांक्षा रखनी चाहिए। सब लोग दोनों हाथ पसारें। इन्हें याचना मुद्रा में मिला हुआ रखें। मन्त्रोच्चार के साथ-साथ इन्हीं भावनाओं से मन को भरे रहें।

ॐ स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां,
न्याय्येन मार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं,
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥१॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात्॥२॥
श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां, विद्यां पुष्टिं श्रियं बलम्।
तेज आयुष्यमारोग्यं, देहि मे हव्यवाहन॥३॥ -लौगा० स्मृ०

॥ पुष्पांजलिः ॥

यह विदाई सत्कार है। देव आगमन पर उनका आतिथ्य, स्वागत-सत्कार किया गया था। यह विदाई सत्कार मन्त्र पुष्पाजंलि के

रूप में किया जाता है। सभी लोग दाएँ हाथ में अक्षत पुष्प लें, मन्त्रोपरान्त देव मंच पर समर्पित करें।

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः, तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त, यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।
ॐ मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि॥ -३१.१६

॥ शान्ति-अभिषिंचनम्॥

यज्ञशाला के दिव्य वातावरण में रखा हुआ जल कलश अपने भीतर उन मंगलकारक दिव्य तत्त्वों को धारण कर लेता है, जो मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति एवं आत्मिक गरिमा की अभिवृद्धि में सहायक होते हैं। जल कलश से पुष्प द्वारा सभी उपस्थित लोगों पर अभिषिंचन करें।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ् शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः, शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः, शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः, सर्व ँ् शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि॥ ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः। सर्वारिष्ट-सुशान्तिर्भवतु। -३६.१७

॥ सूर्यार्घ्यदानम्॥

हमारी हीन वृत्तियाँ, सविता देव के संसर्ग से ऊर्ध्वगामी बनें, विराट् में फैलें, सीमित जीव, चंचल जीवन-असीम अविचल ब्रह्म से जुड़े, इसी भाव से सूर्यार्घ्यदान करें। सभी लोग पूर्व की तरफ मुख करके खड़े हों। एक प्रतिनिधि अर्घ्य दें। सभी लोग भावनात्मक अर्घ्य प्रदान करें।

ॐ सूर्यदेव! सहस्रांशो, तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या, गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥
ॐ सूर्याय नमः, आदित्याय नमः, भास्कराय नमः।

॥ प्रदक्षिणा॥

सब लोग दायें हाथ की ओर घूमते हुए अपने स्थान पर परिक्रमा करें। संकल्प करें कि श्रेष्ठ पथ पर सतत चलते रहेंगे। लोभ, मोह, डर-भय के कारण इसका परित्याग नहीं करेंगे। समय एवं परिस्थिति के अनुसार यज्ञशाला-मंदिर आदि की परिक्रमा तथा यज्ञ महिमा, गायत्री स्तुति, गुरु वन्दना आदि कर लिए जाएँ।

ॐ यानि कानि च पापानि, ज्ञाताज्ञातकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति, प्रदक्षिण पदे-पदे॥

॥ विसर्जनम्॥

आवाहन किये गये यज्ञ पुरुष, गायत्री माता, देव परिवार सबको भावभरी विदाई देते हुए पूजा वेदी पर पुष्प वर्षा करें। विसर्जन के साथ यह प्रार्थना भी है कि ऐसा ही देव अनुग्रह बार-बार मिलता रहे।

ॐ गच्छ त्वं भगवन्नग्ने, स्वस्थाने कुण्डमध्यतः।
हुतमादाय देवेभ्यः, शीघ्रं देहि प्रसीद मे॥
गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ, स्वस्थाने परमेश्वर!।
यत्र ब्रह्मादयो देवाः, तत्र गच्छ हुताशन!॥
यान्तु देवगणाः सर्वे, पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं, पुनरागमनाय च॥



॥ गायत्री-आरती ॥

जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता।
सत मारग पर हमें चलाओ, जो है सुख दाता ॥ जयति० ॥
आदि शक्ति तुम अलख-निरंजन जग पालन कर्त्री।
दुःख-शोक-भय-क्लेश-कलह-दारिद्र्य दैन्यहर्त्री ॥ जयति० ॥
ब्रह्मरूपिणी प्रणत पालिनी, जगत् धातृ अम्बे।
भवभयहारी जन-हितकारी, सुखदा जगदम्बे ॥ जयति० ॥
भय-हारिणी भव-तारिणि अनघे, अज आनन्द राशी।
अविकारी अघहरी अविचलित, अमले अविनाशी ॥ जयति० ॥
कामधेनु सत्-चित् आनन्दा, जय गङ्गा गीता।
सविता की शाश्वती शक्ति तुम, सावित्री सीता ॥ जयति० ॥
ऋग्, यजु, साम, अथर्व प्रणयिनी, प्रणव महामहिमे।
कुण्डलिनी सहस्त्रार सुषुम्ना, शोभा गुण-गरिमे ॥ जयति० ॥
स्वाहा स्वधा शची ब्रह्माणी, राधा रुद्राणी।
जय सतरूपा वाणी, विद्या, कमला, कल्याणी ॥ जयति० ॥
जननी हम हैं, दीन-हीन, दुःख दारिद के घेरे।
यदपि कुटिल कपटी कपूत, तऊ बालक हैं तेरे ॥ जयति० ॥
स्नेह सनी करुणामयि माता! चरण शरण दीजै।
बिलख रहे हम शिशु सुत तेरे, दया दृष्टि कीजै ॥ जयति० ॥
काम-क्रोध मद-लोभ-दम्भ-दुर्भाव-द्वेष हरिये।
शुद्ध बुद्धि निष्पाप हृदय, मन को पवित्र करिये ॥ जयति० ॥
तुम समर्थ सब भाँति तारिणी, तुष्टि-पुष्टि त्राता।
सत मारग पर हमें चलाओ, जो है सुख दाता ॥ जयति० ॥
जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता ॥

।। यज्ञ महिमा ।।

यज्ञ रूप प्रभो हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिए।।
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें।।
अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर उपकार को।
धर्म मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को।।
नित्य श्रद्धा-भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें।
रोग पीड़ित विश्व के संताप सब हरते रहें।।
कामना मिट जाय मन से, पाप अत्याचार की।
भावनाएँ शुद्ध होवें, यज्ञ से नर-नारि की।।
लाभकारी हो हवन, हर जीवधारी के लिए।
वायु-जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किए।।
स्वार्थ भाव मिटे हमारा, प्रेम पथ विस्तार हो।
'इदं न मम' का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो।।
हाथ जोड़ झुकाय मस्तक, वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणारूप करुणा, आपकी सब पर रहे।।
यज्ञ रूप प्रभो हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिए।।

।। गुरुवन्दना ।।

एक तुम्हीं आधार सद्गुरु, एक तुम्हीं आधार।
जब तक मिलो न तुम जीवन में।
शान्ति कहाँ मिल सकती मन में।।

खोज फिरा संसार सद्‌गुरु ॥ एक तुम्हीं० ॥

कैसा भी हो तैरन हारा।

मिले न जब तक शरण सहारा ॥

हो न सका उस पार सद्‌गुरु ॥ एक तुम्हीं० ॥

हे प्रभु ! तुम्हीं विविध रूपों में।

हमें बचाते भव कूपों से ॥

ऐसे परम उदार सद्‌गुरु ॥ एक तुम्हीं० ॥

हम आये हैं द्वार तुम्हारे।

अब उद्धार करो दुःखहारे ॥

सुन लो दास पुकार सद्‌गुरु ॥ एक तुम्हीं० ॥

छा जाता जग में अँधियारा।

तब पाने प्रकाश की धारा।

आते तेरे द्वार सद्‌गुरु ॥ एक तुम्हीं० ॥

॥ हमारा युग निर्माण सत्संकल्प ॥

१- हम ईश्वर को सर्वव्यापी, न्यायकारी मानकर उसके अनुशासन को अपने जीवन में उतारेंगे।

२- शरीर को भगवान् का मन्दिर समझकर आत्म-संयम और नियमितता द्वारा आरोग्य की रक्षा करेंगे।

३- मन को कुविचारों और दुर्भावनाओं से बचाये रखने के लिए स्वाध्याय एवं सत्संग की व्यवस्था रखे रहेंगे।

४- इन्द्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम और विचार संयम का सतत अभ्यास करेंगे।

५- अपने आपको समाज का एक अभिन्न अंग मानेंगे और सबके हित में अपना हित समझेंगे।

६- मर्यादाओं को पालेंगे, वर्जनाओं से बचेंगे, नागरिक कर्त्तव्यों का पालन करेंगे और समाज निष्ठ बने रहेंगे।

७- समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी को जीवन का एक अविच्छिन्न अंग मानेंगे।

८- चारों ओर मधुरता, स्वच्छता, सादगी एवं सज्जनता का वातावरण उत्पन्न करेंगे।

९- अनीति से प्राप्त सफलता की अपेक्षा नीति पर चलते हुए असफलता को शिरोधार्य करेंगे।



१०- मनुष्य के मूल्यांकन की कसौटी उसकी सफलताओं, योग्यताओं एवं विभूतियों को नहीं, उसके सद्विचारों और सत्कर्मों को मानेंगे।

११- दूसरों के साथ वह व्यवहार नहीं करेंगे, जो हमें अपने लिए पसन्द नहीं।

१२- नर-नारी परस्पर पवित्र दृष्टि रखेंगे।

१३- संसार में सत्प्रवृत्तियों के पुण्य प्रसार के लिए अपने समय, प्रभाव, ज्ञान, पुरुषार्थ एवं धन का एक अंश नियमित रूप से लगाते रहेंगे।

१४- परम्पराओं की तुलना में विवेक को महत्त्व देंगे।

१५- सज्जनों को संगठित करने, अनीति से लोहा लेने और नवसृजन की गतिविधियों में पूरी रुचि लेंगे।

१६- राष्ट्रीय एकता एवं समता के प्रति निष्ठावान् रहेंगे। जाति, लिङ्ग, भाषा, प्रान्त, सम्प्रदाय आदि के कारण परस्पर कोई भेदभाव न बरतेंगे।

१७- मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है, इस विश्वास के आधार पर हमारी मान्यता है कि हम उत्कृष्ट बनेंगे और दूसरों को श्रेष्ठ बनायेंगे, तो युग अवश्य बदलेगा।

१८- 'हम बदलेंगे-युग बदलेगा',' हम सुधरेंगे-युग सुधरेगा' इस तथ्य पर हमारा परिपूर्ण विश्वास है।

॥ जयघोष ॥

१. गायत्री माता की- जय। २. यज्ञ भगवान् की- जय।
३. वेद भगवान् की- जय। ४.भारतीय संस्कृति की- जय।
५. भारत माता की- जय। ६. एक बनेंगे- नेक बनेंगे।
७. हम बदलेंगे- युग बदलेगा। ८. हम सुधरेंगे- युग सुधरेगा।
९. ज्ञान यज्ञ की लाल मशाल- सदा जलेगी-सदा जलेगी।
१०. ज्ञान यज्ञ की ज्योति जलाने-हम घर-घर में जायेंगे।
११. नया सबेरा नया उजाला-इस धरती पर लायेंगे।
१२. नया समाज बनायेंगे- नया जमाना लायेंगे।
१३. जन्म जहाँ पर-हमने पाया। १४. अन्न जहाँ का- हमने खाया।
१५. वस्त्र जहाँ के-हमने पहने। १६. ज्ञान जहाँ से- हमने पाया।
१७. वह है प्यारा-देश हमारा।
१८. देश की रक्षा कौन करेगा- हम करेंगे, हम करेंगे।
१९. युग निर्माण कैसे होगा- व्यक्ति के निर्माण से।
२०. माँ का मस्तक ऊँचा होगा- त्याग और बलिदान से।
२१. नित्य सूर्य का ध्यान करेंगे- अपनी प्रतिभा प्रखर करेंगे।
२२. मानव मात्र-एक समान। २३. नर और नारी- एक समान।
२४. जाति वंश सब-एक समान।
२५. नारी का सम्मान जहाँ है-संस्कृति का उत्थान वहाँ है।
२६. जागेगी भाई जागेगी- नारी शक्ति जागेगी।
२७. विचार क्रान्ति अभियान-सफल हो, सफल हो, सफल हो।
२८. हमारी युग निर्माण योजना-सफल हो,सफल हो, सफल हो।
२९. हमारा युग निर्माण सत्संकल्प- पूर्ण हो, पूर्ण हो, पूर्ण हो।
३०. इक्कीसवीं सदी- उज्ज्वल भविष्य।
३१. वन्दे- वेद मातरम्।

॥ देव-दक्षिणा-श्रद्धाञ्जलि ॥

त्यागने योग्य दुष्प्रवृत्तियाँ

१- चोरी, बेईमानी, छल, मुनाफाखोरी, हराम की कमाई, मुफ्तखोरी, रिश्वत आदि अनीति से दूर रहना, अनीति से उपार्जित धन का उपयोग न करना। २- मांसाहार तथा मारे हुए पशुओं के चमड़े का प्रयोग बंद करना। ३- पशुबलि अथवा दूसरों को कष्ट पहुँचाकर अपना भला करने की प्रवृत्ति छोड़ना। ४- विवाहों में दहेज लेने तथा जेवर चढ़ाने का आग्रह न करना। ५-विवाहों की धूमधाम में धन की और समय की बर्बादी न करना। बाल विवाह एवं मृतक भोज का त्याग। ६- नशे (तम्बाकू, शराब, भाँग, गाँजा, अफीम आदि) का त्याग। ७- गाली-गलौज एवं कटु भाषण का त्याग। ८- जेवर, सौन्दर्य-प्रसाधन और फैशनपरस्ती का त्याग। ९- अन्न की बर्बादी और जूठन छोड़ने की आदत का त्याग। सात्विक आहार ही ग्रहण करना। १०- जाति-पाँति के आधार पर ऊँच-नीच, छूत-छात न मानना। ११- पर्दाप्रथा का त्याग, किसी को पर्दा करने के लिए बाध्य न करना। स्वयं पर्दा न करना। १२- महिलाओं एवं लड़कियों के साथ पुरुषों और लड़कों की तुलना में भेदभाव या पक्षपात न करना। १३- अश्लील चित्र, गंदे उपन्यास, गंदे सिनेमा एवं गंदे गीतों का त्याग। १४-जुआ, लॉटरी, सट्टे, आडंबर एवं विलासिता से दूर रहना।

अपनाने योग्य सत्प्रवृत्तियाँ

१- कम से कम दस मिनट नित्य नियमित गायत्री उपासना। २- घर में अपने से बड़ों का नियमित अभिवादन करना। ३- छोटों के सम्मान का ध्यान रखना, उनसे तू करके न बोलना। ४- अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक रहना तथा उनका पालन करना। ५- परिश्रम का अभ्यास बनाए रहना, किसी काम को छोटा न समझना। ६- नियमित स्वाध्याय, जीवन को सही दिशा देने वाला सत्साहित्य कम से कम आधा घंटे नित्य स्वयं पढ़ना या सुनना। ७- भारतीय संस्कृति की प्रतीक शिखा एवं यज्ञोपवीत का महत्त्व समझना, उन्हें निष्ठापूर्वक धारण करना, दूसरों को प्रेरणा देना। ८- सादगी का जीवन जीना, औसत भारतीय स्तर के रहन-सहन के अनुरूप विचार एवं अभ्यास बनाना। उसमें गौरव अनुभव करना। ९- ज्ञानयज्ञ, सद्विचार के प्रसार के लिए कम से कम एक रुपया और एक घंटा समय प्रतिदिन बचाकर सही ढंग से खर्च करना। १०- परिवार में सामूहिक उपासना, आरती आदि का क्रम चलाना।

युग निर्माण मिशन- संक्षिप्त परिचय

उद्देश्य- मनुष्य में देवत्व का उदय एवं धरती पर स्वर्ग का अवतरण। व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण, समाज निर्माण। नैतिक क्रांति, बौद्धिक क्रांति एव सामाजिक क्रांति द्वारा जनमानस का भावनात्मक परिष्कार।

गठन- नव निर्माण के लिए तत्पर नित्य एक घंटे समय दान और ५० पैसे अंश दान करने वाले लाखों कर्मनिष्ठों का पारिवारिक संगठन। प्रचारात्मक, रचनात्मक और सुधारात्मक कार्यक्रमों द्वारा मानवीय गरिमा को उभारने वाली गतिविधियों में संलग्न समुदाय।

आधार- योजना एवं शक्ति परमात्म सत्ता की, संरक्षण एवं मार्गदर्शन ऋषि सत्ता का, पुरुषार्थ एवं सहकार युग साधकों का।

प्रमुख संस्थान- १- गायत्री तपोभूमि, मथुरा, २- अखण्ड ज्योति कार्यालय, मथुरा, ३- गायत्री शक्तिपीठ आँवलखेड़ा, आगरा, ४- शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार एवं ५- ब्रह्मवर्चस, हरिद्वार। भारत एवं विदेश में लगभग ४००० शक्तिपीठ, प्रज्ञापीठ एवं गायत्री परिवार की शाखाओं द्वारा प्रचार-प्रसार।

प्रकाशन- युग निर्माण योजना (मासिक), अखण्ड ज्योति (मासिक)तथा अन्य पत्रिकाएँ भारत के विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित। विभिन्न विषयों (यथा- आर्षग्रन्थ, जीवन निर्माण, वैज्ञानिक अध्यात्म, नारी जागरण, रचनात्मक अभियान आदि) पर पूज्य गुरुदेव द्वारा रचित पुस्तकों का हिन्दी एवं देश की विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशन।

गतिविधियाँ एवं प्रचार- धर्म तन्त्र से लोकशिक्षण, यज्ञ की साक्षी में दोष-दुर्गुण छोड़ने एवं सद्गुण अपनाने का संकल्प, युग निर्माण विद्यालय, मथुरा, नौ दिवसीय साधना सत्र, एक मासीय युग शिल्पी सत्र, परिव्राजक सत्र, रचनात्मक सत्रों का शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार में नियमित आयोजन। टोलियों द्वारा देश-विदेश में मिशन का प्रचार-प्रसार। **कार्यक्षेत्र**- समस्त भारतवर्ष एवं विश्व।

यज्ञ का माहात्म्य

प्राञ्चं यज्ञं प्रणयता सखायः।

—ऋग्वेद १०/१०१/२

प्रत्येक शुभ कार्य को यज्ञ के साथ आरंभ करो।

भद्रो नो अग्निराहुतः।

—यजुर्वेद १५/३८

यज्ञ में दी हुई आहुतियाँ कल्याणकारक होती हैं।

अयज्ञियो हतवर्चा भवति।

—अथर्ववेद १२/२/२७

यज्ञ न करने वाले का तेज नष्ट हो जाता है।

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।

—मनुस्मृति २.२८

यज्ञ और महायज्ञों के द्वारा इस काया में ब्राह्मणत्व का जागरण होता है।

नाग्निहोत्रात्परो धर्मः।

—कूर्मपुराण

अग्निहोत्र से बढ़कर और कोई धर्मकार्य नहीं।

यज्ञाः कल्याणहेतवः।

—विष्णु पुराण

यज्ञ से सबका कल्याण होता है।

सर्वबाधानिवृत्यर्थं सर्वान् देवान् यजेत् बुधः।

—शिव पुराण

सभी बाधाओं की निवृत्ति के लिए बुद्धिमान पुरुषों को देवताओं का यजन (पूजन) करना चाहिए।

अनाहूतोऽध्वरं व्रजेत्।

—याज्ञवल्क्य स्मृति

बिना बुलाए भी यज्ञ में सम्मिलित होना चाहिए।

मिशन की पत्रिकाएँ

(१) अखण्ड ज्योति (मासिक)

(धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का विज्ञान एवं तर्क-तथ्य-प्रमाण की कसौटी पर खरा चिंतन)

वार्षिक शुल्क-108.00, आजीवन शुल्क-2000.00 रुपया।

अखण्ड ज्योति अंग्रेजी (द्वि-मासिक)

वार्षिक शुल्क-78.00 रुपया

पता : अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा-281003

फोन : (0565) 2403940

(२) युग निर्माण योजना (मासिक)

(व्यक्ति, परिवार, समाज निर्माण एवं सात आंदोलनों की मार्गदर्शक पत्रिका)

वार्षिक शुल्क-54.00, आजीवन शुल्क-1000.00 रुपया।

युग शक्ति गायत्री (गुजराती मासिक)

(गायत्री महाविज्ञान, धर्म, अध्यात्म एवं युगानुकूल विचार परिवर्तन का मार्गदर्शन)

वार्षिक शुल्क-85.00, आजीवन शुल्क-1800.00 रुपया।

पता : युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281003

फोन : (0565) 2530128, 2530399

फैक्स : (0565) 2530200

(३) प्रज्ञा अभियान (पाक्षिक)

(युग निर्माण मिशन के क्रियाकलापों एवं मार्गदर्शन का समाचार-पत्र)

वार्षिक शुल्क-24.00 रुपया।

पाक्षिक वीडियो पत्रिका : युग प्रवाह

(युग निर्माण मिशन के प्रमुख क्रियाकलापों की दृश्य-श्रव्य जानकारी)

वार्षिक शुल्क-1500.00 रुपया।

पता : शांतिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तराखंड) फोन : 01334-260602

YS 03